दैनिक जागरण
बाधा जितनी बड़ी होती है, विजय भी उतनी ही बड़ी होती है

कांग्रेस का असमंजस

राहुल गांधी की ओर से कांग्रेस अध्यक्ष पद से इस्तीफे की पेशकश किए जाने के एक माह बाद भी यह जानना कठिन है कि पार्टी में क्या हो रहा है और उसका नेतृत्व कौन संभालने वाला है? राहुल गांधी एक ओर यह कह रहे हैं कि वह अपने फैसले पर अडिग हैं और दूसरी ओर बतौर अध्यक्ष बैठकें और फैसले भी करने में लगे हुए हैं। गत दिवस उन्होंने विभिन्न राज्यों के नेताओं के साथ बैठक करने के साथ छत्तीसगढ़ में कांग्रेस के नए अध्यक्ष की नियुक्ति भी की। उन्होंने यह भी दर्द बयान किया कि उनकी ओर से इस्तीफे की पेशकश किए जाने के बाद भी कांग्रेस के वरिष्ठ नेता अपनी जिम्मेदारी का अहसास नहीं कर रहे हैं। आखिर वह इन वरिष्ठ नेताओं से क्या चाह रहे हैं? क्या वह यह चाहते हैं कि सभी वरिष्ठ नेता और खासकर वे नेता अपना पद छोड़ दें जिनके प्रति वह अपनी नाखुशी प्रकट कर चुके है? अगर राहुल गांधी ऐसा ही चाह रहे हैं तो इसका मतलब यही निकलता है कि वह लोकसभा चुनाव में हार के लिए अपने साथ-साथ इन नेताओं को भी जिम्मेदार मान रहे हैं। पता नहीं वह क्या सोच रहे हैं, लेकिन पार्टी के संविधान के मुताबिक तो कुछ होता हुआ दिखता नहीं। कांग्रेस के संविधान के अनुसार पार्टी अध्यक्ष के त्यागपत्र की स्थिति में नए अध्यक्ष की नियुक्ति होने तक कार्यसमिति किसी को अंतरिम अध्यक्ष बनाएगी। कहीं इसमें इसलिए देरी तो नहीं हो रही है, क्योंकि राहुल गांधी अपने इस्तीफे की पेशकश तक ही सीमित हैं और यह स्पष्ट नहीं कि अध्यक्ष न रहने की स्थिति में पार्टी में उनकी क्या भूमिका होगी? अभी तो यही लग रहा है कि अगर वह अध्यक्ष पद छोड़ भी देते हैं तो पर्दे के पीछे से पार्टी वही चलाते रहेंगे। इस सिलसिले में इसकी भी अनदेखी नहीं कर सकते कि वह पार्टी में सक्रिय बने रहने और जनता की लड़ाई लड़ते रहने की बात कर रहे हैं।

विश्व राजनीति में ऐसे उदाहरण कम ही मिलते हैं कि किसी नेता ने पार्टी की कमान छोड़ने के बाद फिर से उसकी कमान संभाली हो, लेकिन भारतीय राजनीति में कई ऐसे नेता रहे जिन्होंने पार्टी की अध्यक्षता छोड़ने के कुछ समय बाद फिर से उसकी कमान अपने हाथ में ले ली। यह काम इंदिरा गांधी भी कर चुकी हैं। पहली बार वह नेहरू के समय ही कांग्रेस अध्यक्ष बन गई थीं। दोबारा उन्होंने 1970 के दशक में पार्टी की कमान संभाली और फिर उसके बाद से कांग्रेस पूरी तौर पर गांधी परिवार की पार्टी बनकर रह गई। यह किसी से छिपा नहीं कि नरसिंह राव और सीताराम केसरी को किस तरह गांधी परिवार के दवाब में काम करना पड़ा। इसी दबाव का सामना मनमोहन सरकार को भी करना पड़ा। अगर कांग्रेस को गांधी परिवार के हिसाब से ही चलना है तो फिर राहुल गांधी के अध्यक्ष पद छोड़ने का कोई मतलब नहीं। यह भी ध्यान रहे कि जहां सोनिया गांधी संप्रग अध्यक्ष हैं वहीं प्रियंका गांधी वाड्रा महासचिव के रूप में सक्रिय हैं। क्या यह संभव है कि गांधी परिवार के बाहर का कोई पार्टी अध्यक्ष प्रियंका गांधी को आदेश-निर्देश दे सके?

महागठबंधन और ममता

पश्चिम बंगाल की मुख्यमंत्री एवं तृणमूल प्रमुख ममता बनर्जी ने बुधवार को विधानसभा में कहा कि देश एवं राज्य हित में भाजपा से लड़ने के लिए तृणमूल, वाममोर्चा और कांग्रेस एकजुट हों। विधानसभा के मानसून सत्र में बुधवार को पहली बार भाग लेने के लिए पहुंचीं ममता ने राज्यपाल के अभिभाषण पर जवाब देते हुए नेता विपक्ष अब्दुल मन्नान और वाममोर्चा विधायक दल के नेता सुजन चक्रवर्ती से कहा कि वृहत्तर स्वार्थ के लिए हम सभी को एकजुट होने की आवश्यकता है। हालांकि ममता ने यह भी कहा कि इसका यह मतलब नहीं कि हम राजनीतिक रूप से कोई गठजोड़ करें, लेकिन राष्ट्रीय स्तर पर जो हमारे साझा मुद्दे हैं, उन पर हम साथ आ सकते हैं। ममता की इस अपील को तुरंत वाममोर्चा और कांग्रेस ने खारिज कर दिया था। ऐसा नहीं है कि तृणमूल प्रमुख ने पहली बार वाममोर्चा एवं कांग्रेस को एकजुट करने की बात कही है। इससे पहले पिछले वर्ष 21 जुलाई की अपनी रैली से ममता ने सभी भाजपा विरोधी दलों को एकजुट होने की अपील की थी, यहां तक कि अपने धुरविरोधी माकपा को भी साथ आने के लिए कहा था। इसके लिए भाजपा विरोधी विपक्षी दलों की लोकसभा चुनाव से पहले 19 जनवरी को ब्रिगेड परेड मैदान में संयुक्त रैली आयोजित की थी। जिसमें कांग्रेस समेत 23 दलों के नेता पहुंचे थे, लेकिन वामदल शामिल नहीं हुए थे। इसीलिए ममता को भी पता है कि उनकी यह अपील काम नहीं करने वाली है। ऐसे में भाजपा हमलावर हो गई और कहने लगी कि सुश्री बनर्जी ने भी मान लिया है कि वह अकेले भाजपा से मुकाबला नहीं कर सकतीं। ऐसे में तृणमूल के लिए ममता का यह बयान कहीं उल्टा न पड़ जाए इसको देखते हुए गुरुवार को तृणमूल की ओर से विधानसभा में संसदीय कार्यों के राज्यमंत्री तापस राय ने कहा कि मुख्यमंत्री ने वाम एवं कांग्रेस से गठबंधन की बातें नहीं कही है। मीडिया ने उनकी बातों की गलत व्याख्या की है। इस पर वाममोर्चा एवं कांग्रेस के विधायकों ने विरोध किया और कहा कि मीडिया ने गलत नहीं कहा है इसके बाद वे लोग वाकआउट कर गए, परंतु यहां एक बड़ा सवाल यह उठ रहा है कि आखिर मीडिया ने अपने मन से तो ऐसी खबरें नहीं प्रकाशित-प्रचारित की है?

शिक्षा को भारत केंद्रित बनाने का अवसर

गिरीश्वर मिश्र

त्रिभाषा सूत्र बहुभाषा भाषी भारतीय समाज के लिए सर्वथा उपयुक्त है। भाषा के संस्कार द्वारा ही संस्कृति एवं ज्ञान की समस्त विधाओं में प्रवेश और विचार की दृष्टि मिलती है

भारत सरकार द्वारा नई शिक्षा नीति-2019 का मसौदा 21वीं सदी के लिए 'भारत केंद्रित' और 'जीवंत ज्ञान समाज' के निर्माण के संकल्प के साथ प्रस्तुत हुआ है। भारत को केंद्र में रख कर शिक्षा पर विचार करना उन सभी लोगों के लिए सुखद और संतोषदायी अनुभूति है जो उसके विस्मरण, उपेक्षा या अवांछित प्रस्तुति से खिन्न रहा करते थे। ऐसे ही 'ज्ञान केंद्रित समाज' का विचार भी भारतीयों के लिए संतोषदायी प्रतीत होता है जो ज्ञान को पवित्र, क्लेश दूर करने, मुक्ति देने वाला मानते हैं। यह जरूर आश्चर्यजनक है कि स्वामी विवेकानंद के आधे-अधूरे वक्तव्य के अलावा कोई सार्थक भारतीय विचार उल्लेख करने योग्य नहीं मिला। समृद्ध ज्ञान की शंकराचार्य, तिरुवल्लूर से लेकर कबीर तक शास्त्रीय और लोक-प्रचलित अनेक परंपराएं भी पूरे भारत में मौजूद हैं। शिक्षा की मानवीय परिकल्पना को साकर करने वाले दो महापुरुषों का स्मरण किए बिना मन नहीं मानता। एक तो नोबल विजेता पाने वाले गुरुदेव रबींद्रनाथ टैगोर हैं, जिन्होंने ऐसे भारत की कल्पना की थी 'जहां चित्त भय शून्य हो, जहां सिर उन्नत हो, जहां ज्ञान मुक्त हो।' गुरुदेव के हिसाब से शिक्षा मुक्त करती है और ज्ञान के आंतरिक प्रकाश से परिपूर्ण कर देती है। रचना और सृजन से भरी शिक्षा वासनाओं और पूर्वाग्रहों से मुक्त कर विश्व को स्वीकार करने का साहस देती है और अनुभव करने के लिए सहानुभूति देती है। दूसरे महापुरुष हैं महात्मा गांधी, उनके विचार में 'शिक्षा का मूल उद्देश्य मनुष्य को सच्चे अर्थ में मनुष्य बनाना है। जो शिक्षा मानवीय सद्गुणों के विकास में योग नहीं देती और व्यक्ति के सर्वांगीण विकास का मार्ग नहीं प्रशस्त करती वह शिक्षाअनुपयोगी है।' वह यह भी कहते थे कि 'बालक की आध्यात्मिक, मानसिक और शारीरिक क्षमताओं के पूर्ण विकास का दायित्व शिक्षा पर है।' जब तक शरीर, मस्तिष्क और आत्मा का विकास एक साथ नहीं हो जाता तब तक केवल बौद्धिक विकास एकांगी ही रहेगा। दोनों ही महापुरुष शिक्षा को भारत, ज्ञान और मनुष्यता के व्यापक परिप्रेक्ष्य में देख रहे थे। शिक्षा नीति ने प्रकट रूप से भारत के बाहर के चिंतन को ही भारत को समझने का प्रमुख आधार बनाया है।

21वीं सदी की दुनिया में खड़े होकर भारत केंद्रित विचार ही इस नीति का खांचा और ढांचा है। यह भी उल्लेखनीय है कि 21 वीं सदी की अवधारणा सिर्फ वैश्वीकरण, प्रौद्योगिकीकरण विशेषत डिजिटलीकरण के अर्थ में ली गई है जो भारत को एक बड़ी आर्थिक शक्ति के रूप रूपांतरित करने के लिए जरूरी है। ज्ञान-समाज का आशय भी यहीं से लिया गया है। ज्ञान केंद्रित समाज सूचना और ज्ञान आधारित सामाजिक-आर्थिक संगठन को न्योता देता है। सूचना, ज्ञान के उत्पादन और प्रसार से उपजे नवाचार को आत्मसात करने के लिए जरूरी है आर्थिक और सामाजिक विकास की संतुलित सार्वजनिक नीति का विकास करना, उसे लागू करना और उसे निरंतर तरो-ताजा करते रहना। आशा की जाती है कि डिजिटल तकनीक के उपयोग द्वारा पारदर्शिता आएगी, व्यापार की क्षमता बढ़ेगी, नागरिक सुविधाओं को बढ़ाना संभव होगा।

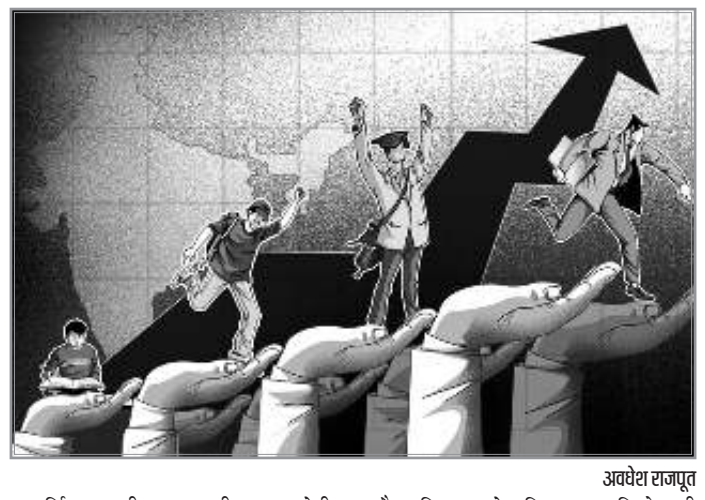

अवधेश राजपूत

पश्चिमी दुनिया में औद्योगिक क्रांति के बाद सूचना का युग आया और अब ज्ञान का युग घोषित हुआ है जो उत्तर आधुनिकता की निशानी है। ज्ञान-समाज में सूचना नहीं ज्ञान सबसे बड़ी संपदा है। लोगों के मन मस्तिष्क में क्या बसा है और क्या भौतिक रूप में आ सकता है वही अर्थव्यवस्था को आगे ले चलेगा। उच्च विकास की स्थिति वाले समाज में ज्ञान के उत्पादन और उपयोग से समृद्धि और खुशहाली लाने का स्वप्न देखा जा रहा है। वस्तुत ज्ञान-समाज उन समाजों को व्यक्त करता है जो आर्थिक और सांस्कृतिक रूप से वैज्ञानिक और तकनीकी ज्ञान पैदा करने की क्षमता पर निर्भर हैं। ज्ञान अब बाजार में एक खास व्यापारिक उत्पाद है। ज्ञान-समाज रचना और विधि की दृष्टि से एक वैचारिक चेतना को व्यक्त करते हैं। ऐसे समाज में शिक्षा जीवनपर्यंत चलती रहेगी, क्योंकि पुराना व्यर्थ होता रहेगा नया अर्जित करते रहना होगा। ज्ञान की जटिलता निरंतर बढ़ती जाएगी। तीव्र गति से मिलती सूचना के अर्थ को ग्रहण करने और जटिल ज्ञान के प्रति एक नए दृष्टिकोण की जरूरत होगी। सीखने की व्यक्तिनिष्ठता और ज्ञान-वितरण के वैश्वीकरण के बीच अध्यापक को फिर से परिभाषित करना होगा।

ज्ञान और सूचना आज आम आदमी की जिंदगी पर असर डाल रहे हैं। सूचना और संचार की प्रौद्योगिकी को साझा करना अर्थव्यवस्था और समाज को बदलने की शक्ति रखता है। समावेशी ज्ञान समाज के निर्माण के लिए सूचना तक सबकी पहुंच बनाना प्रमुख आधार है। माना जा रहा है कि सूचना तक सार्वभौम पहुंच होने से शांति होगी और साथ ही टिकाऊ आर्थिक विकास होगा। शिक्षा नीति-2019 का मसौदा भारत में शिक्षा की प्रचलित विसंगतियों का गहन विश्लेषण करने के उपरांत भ्रष्टाचारमुक्त व्यवस्था की वकालत करता है। भविष्य की अपेक्षाओं का आकलन कर महत्वपूर्ण संस्तुतियां की गई हैं। यह संतोष का विषय है कि इसमें भाषा और संस्कृति के महत्व को भी केंद्रीय स्थान दिया गया है। शिक्षा की व्यवस्था से जुड़े कई व्यावहारिक प्रश्नों पर पहली बार विचार करते हुए उसके बहुस्तरीय पुनर्गठन और तदनुसार आवश्यक संसाधनों का प्रस्ताव भी इसमें प्रस्तुत किया गया है। इसमें उल्लिखित त्रिभाषा सूत्र बहुभाषा भाषी भारतीय समाज के लिए सर्वथा उपयुक्त है। भाषा के संस्कार द्वारा ही संस्कृति और ज्ञान की समस्त विधाओं में प्रवेश मिलता है और विचार की दृष्टि मिलती है। इस त्रिभाषा सूत्र में अंग्रेजी की अनिवार्यता नहीं होनी चाहिए। उसके स्थान पर किसी भारतीय / विदेशी भाषा का चयन का अवसर मिलना चाहिए। कक्षा 6-8 तक प्राचीन (क्लासिकल) भाषा के अध्ययन का प्रस्ताव अत्यंत उपयोगी है। भारतीय ज्ञान परंपरा का परिचय अनिवार्य रूप से सभी छात्रों को दिया जाना समय की मांग है।

आज की हकीकत को देखते हुए नई शिक्षा नीति का यह मसौदा एक बड़ी छलांग है जो किसी भी तरह संपूर्ण क्रांति से कम नहीं है। पूर्व प्राथमिक से लेकर उच्च शिक्षा तक से जुड़े सभी मुद्दों पर आमूलचूल परिवर्तन का संकल्प लेकर उपस्थित यह दस्तावेज बड़ी आशावादिता के साथ संरचनात्मक परिवर्तनों, प्रक्रियाओं और विद्यार्थी की ज्ञान और कौशल की सभी संभव संभावनाओं के लिए अवसर का प्रावधान प्रस्तुत करता है। यह अध्यापकों की उपलब्धता की व्यवस्था, उनके प्रशिक्षण और उनकी जीवन दशा को सुधारने के लिए सुझाव भी देता है। यह अवश्य है कि स्वायत्तता देने की बात कहकर अनेक जटिल संरचनाएं प्रस्तुत हुई हैं जो उसे काटती हैं। अब तक भारत में शिक्षा के लिए संसाधन पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध नहीं रहते रहे हैं। साथ ही सरकारी तंत्र शिक्षा के प्रति कितना असंवेदनशील है और प्रचलित व्यवस्थाएं कितने-कितने अवरोधों से बाधित हैं, इसका अनुभव पूरे देश को है। ऐसे में इसे कार्य रूप में लागू करने के लिए दृढ़ राजनीतिक इच्छाशक्ति अपेक्षित है। आशा है सरकार इस मसौदे को सचमुच भारत केंद्रित विचार के साथ लागू करेगी।

(लेखक शिक्षाविद् एवं पूर्व कुलपति हैं)

response@jagran.com

बाल संरक्षण कानूनों में बदलाव जरूरी

सुरन्या अय्यर

बाल अधिकार क्षेत्र एक बड़ा उदाहरण है कि कैसे बुद्धिजीवी और विशेषज्ञ अपनी विद्वता के बावजूद गलत हो सकते हैं

पिछले एक दशक में भारत में बच्चों के लिए कई कानून लाए गए जो एक हानिकारक पश्चिमी मॉडल पर आधारित हैं। अपने देश की वस्तुस्थिति को देखते हुए विदेशी मॉडल पर आधारित बाल संरक्षण नीति में परिवर्तन की तत्काल आवश्यकता है। मुझे उम्मीद है कि स्मृति ईरानी महिला एवं बाल विकास मंत्री के रूप में इस दिशा में एक नई सोच लाने में सक्षम होंगी। दरअसल पश्चिमी प्रणाली में बच्चों को बहुत कमजोर दावों पर उनके माता-पिता से अलग किया जा सकता है। राज्य द्वारा अपने संरक्षण में लिए गए बच्चों को फोस्टर केयर (पालन-पोषण संबंधी देखभाल) में रखा जाता है। फोस्टर संरक्षक बच्चों को पालने के लिए सरकार से मोटी अदायगी प्राप्त करते हैं। अपने परिवारों से से अलग हुए बच्चों के लिए एक और व्यवस्था 'फोर्स्ड एडॉप्शन' (जबरन गोद) है। यह एक क्रूर व्यवस्था है। इसमें बच्चों को पैदाइशी माता-पिता की आपत्तियों के खिलाफ अजनबियों को गोद दिया जाता है। बाल कल्याण एजेंसियों को सख्त गोपनीयता कानूनों द्वारा सार्वजनिक जांच से बचा लिया जाता है। बाल संरक्षण क्षेत्र में पब्लिक-प्राइवेट पार्टनरशिप ने बड़े पैमाने पर फोस्टर केयर और एडॉप्शन का व्यावसायीकरण किया है। वास्तव में बाल अधिकार पेशेवरों और एनजीओ संगठनों के आग्रह पर इस प्रणाली को भारत में अपनाया गया है। भारत में किशोर न्याय अधिनियम, 2015 और मॉडल गाइडलाइन्स फॉर फोस्टर केयर, 2016 के तहत सरकार और एनजीओ कार्यकर्ताओं को बच्चों को उनके माता-पिता से अलग कर देने की बहुत व्यापक शक्तियां दे दी गई हैं। फोस्टर केयर कानूनों के तहत किसी भी बच्चे के माता-पिता को बाल कल्याण समिति (सीडब्ल्यूसी) नामक ट्रिब्यूनल 'अयोग्य' घोषित कर सकती है और बच्चे को अनिवार्य रूप से सरकारी संरक्षण में ले जा सकती है। सरकारी संरक्षण में लिए गए ऐसे बच्चों को जबरदस्ती 18 साल की उम्र तक फोस्टर केयर या अनाथालयों में रखा जा सकता है।

फोस्टर केयर संबंधी दिशानिर्देशों में कहा गया है कि फोस्टर प्लेसमेंट के लिए जैविक माता-पिता की सहमति अनिवार्य नहीं है और इसका दारोमदार केवल 'जरूरत' और 'मौके के हिसाब' से तय किया जाएगा। दिशानिर्देशों में हिदायत दी गई है कि 'बच्चे के परिवारों को यह नहीं बताया जाना चाहिए कि फोस्टर फैमिली या फोस्टर चाइल्ड कहां रह रहे हैं... ताकि फोस्टर फैमिली पर कोई नकारात्मक प्रभाव न पड़े।' पैदाइशी परिवार के प्रति यह नकारात्मक रवैया फोस्टर व्यवस्था के इरादों को अच्छी तरह जाहिर कर देता है। पश्चिमी फोस्टर केयर कानूनों की तरह ही भारतीय फोस्टर केयर कानून में भी बच्चों को मां-बाप से अलग करने के लिए यह जरूरी नहीं है कि बच्चे गंभीर उत्पीड़न या उपेक्षा के शिकार हों। इसके लिए माता-पिता की 'उपयुक्तता' और 'जुबानी उत्पीड़न', मसलन डांट-डपट एवं 'भावनात्मक उत्पीड़न' जैसी वजहों का सहारा लिया जा सकता है।

बाल अधिकार क्षेत्र पूरी तरह से पश्चिमी देशों में उत्पादित किया गया है। चाहे वे भारत में हों या विदेश में, बाल अधिकार पेशेवरों और संगठनों को पश्चिमी प्रणाली में प्रशिक्षित किया जाता है। पश्चिमी बाल संरक्षण मॉडल की विफलताओं के बावजूद वे इससे परे सोचने में असमर्थ हैं। इस विफलता के दो कारण हैं। पहला ऐसे लोग हैं, जो अपने प्रशिक्षण के कारण पश्चिमी परिवार-विरोधी सोच के इतने पक्षपाती हैं कि वे बाल संरक्षण के आलोचकों को रूढ़िवादी बताकर खारिज कर देते हैं। दूसरों के लिए, बाल संरक्षण के पश्चिमी मॉडल का समर्थन करना उनके व्यवसाय में प्रगति का विषय है। बाल अधिकारों की पश्चिमी प्रायोजित दुनिया में पश्चिमी दृष्टिकोण की वकालत किए बिना स्थापित होना मुश्किल है। यह केवल फंडिंग का नहीं, मान्यता का भी विषय है। इस माहौल में महिला एवं बाल विकास मंत्री के पद पर स्मृति ईरानी की नियुक्ति, जो बाल अधिकार विशेषज्ञों के क्षेत्र से जुड़ी नहीं हैं, एक अच्छा बदलाव लाने का कारण बन सकता है। इसकी अनदेखी नहीं की जा सकती कि बाल संरक्षण पेशेवरों द्वारा माताओं के रूप में आम महिलाओं की आवाज को नजरअंदाज किया गया है। बाल अधिकार क्षेत्र इस बात का एक बड़ा उदाहरण है कि कैसे बुद्धिजीवी और विशेषज्ञ अपनी विद्वता के बावजूद गलत हो सकते हैं।

हम माताओं और बच्चों को निर्दयी विशेषज्ञों की जरूरत नहीं है। महिला एवं बाल विकास मंत्री के रूप में हमें एक ऐसी महिला की जरूरत है जो भारतीय परिवारों की गलतियों को स्वीकार कर सकती है, लेकिन जो हमारे दक्षिण एशियाई परिवारों के उन तौर-तरीकों को भी स्वीकार कर सकती है जो बच्चों की परवरिश के लिए अच्छे हैं। एक मां के रूप में मेरी उम्मीद है कि स्मृति ईरानी पश्चिमी बाल संरक्षण के काले बादलों को दूर हटाएंगी

(लेखिका वकील हैं)

response@jagran.com

ऊर्जा

ध्यान

अक्सर हम सभी अपने जीवन में अपने बड़ों और अपनों से इन निर्देशों को जीवन के किसी-न-किसी मोड़ पर अवश्य ही सुना होगा, 'ध्यान से जाना, ध्यान से खाना, ध्यान से पढ़ना, ध्यान से बोलना, ध्यान से काम करना वगैरह, वगैरह।' आशय यह है कि सनातनी योग विज्ञान के सिद्धांतों के एक मूलभूत आयाम के रूप में ध्यान हमारे जीवन का अभिन्न अंग है। हर लम्हा मानव जीवन के पारिवारिक-सामाजिक और धार्मिक संस्कारों से करीबी से जुड़ा हुआ है। यह कहा जा सकता है कि ध्यान ही जीवन है और जीवन ही ध्यान है और सबसे महत्वपूर्ण ध्यान का अभाव ही जीवन का अंत है, जीवन का विनाश है।

क्या आपने कभी चक्रवातीय बवंडर को गौर से देखा है? इसमें जीवन की एक सच्चाई बड़ी खूबसूरती से पिरोयी हुई है और वह यह है कि इसके मध्य एक शांति की जगह या निर्वात होता है जो इस बवंडर को ऊर्जा प्रदान करता है। यदि यह निर्वात न हो तो बवंडर का कभी भी निर्माण नहीं होगा। मानव जीवन और ध्यान का दर्शन इस कुदरती घटना से बिल्कुल अलग नहीं है। झंझावातों और संघर्षों से घिरा मानव जीवन बवंडर की उपमा है और इस जीवन में शांति की तलाश बवंडर के निर्वात सरीखा ही होता है, लेकिन दुर्भाग्यवश हम इस दुर्लभ सत्य को पहचान ही नहीं पाते हैं और अपनी तमाम जिंदगी उधेड़बुन और गलतफहमियों में जाया कर देते हैं। यहां पर गूढ़ रहस्य यही है कि मानव जीवन में ध्यान जीवन के अनिवार्य कठिन परिस्थितियों से लड़ना सिखाता है और अंततः हमें नीरवता की ओर ले जाता है, शांति की राह पर लेकर जाता है।

ध्यान की राह से हम जीवन में परमानंद को प्राप्त कर सकते हैं। जीवन की परेशानियों को जीत सकते हैं। सच पूछिए तो जीवन में शांति और निर्वात का आशय यहां पर जीवन में लिप्साओं पर विजय है, इच्छाओं पर दमन है और सांसारिक सुख-सुविधाओं की अंधी चाह पर नियंत्रण से है। ध्यान के लिए अपनी आंखें बंद कर लेने से मायावी संसार से हमारा संबंध टूट जाता है, पर ऐसी दशा में भी मन की आंखें खुली होती हैं। मन पर फोकस करते हुए अपनी आंखें बंद कर जब हम खुद को अपने परिवेश से संबंध विच्छेद कर लेते हैं तो यही सच्चा ध्यान है और यही आत्मज्ञान और अंतर्ज्ञान की प्राप्ति की अचूक राह है।

श्रीप्रकाश शर्मा

तथ्य-कथ्य | बैंक जालसाजी के बढ़ते मामले (करोड़ रुपये में)

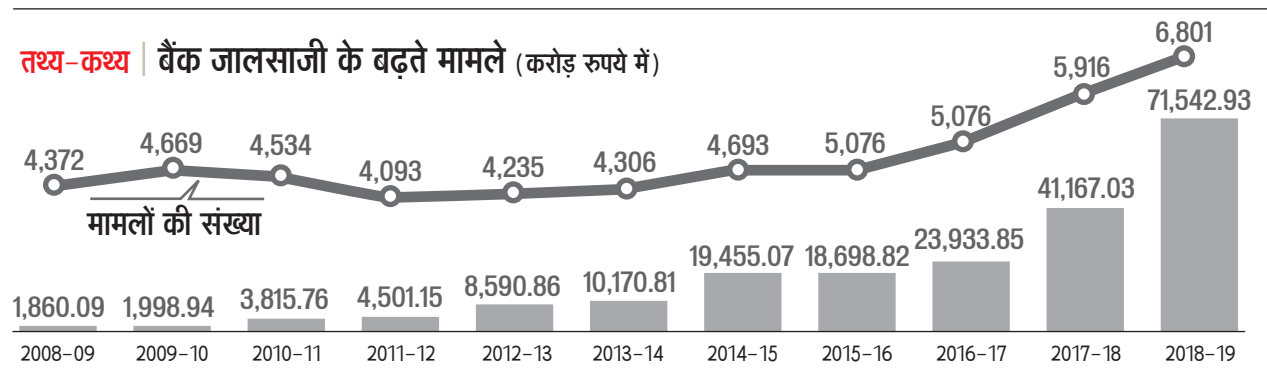

स्वास्थ्य के मोर्चे पर सुधार की दरकार

सुधीर कुमार

स्वास्थ्य पर सरकारी खर्च के मामले में भारत विश्व स्वास्थ्य संगठन के मानक से काफी पीछे है

नीति आयोग ने 'स्वस्थ राज्य, प्रगतिशील भारत' शीर्षक से एक रिपोर्ट जारी की है। शिशु मृत्यु दर, जन्म दर एवं प्रजनन दर सहित कुल 23 संकेतकों के आधार पर तैयार की गई इस स्वास्थ्य सूचकांक में केरल पहले, आंध्र प्रदेश दूसरे और महाराष्ट्र तीसरे स्थान पर है, जबकि 21 बड़े राज्यों की सूची में बिहार 21वें, उत्तर प्रदेश 20वें, उत्तराखंड 19वें और ओडिशा 18वें स्थान पर है। इस स्वास्थ्य सूचकांक का उद्देश्य राज्यों को गुणवत्तापूर्ण स्वास्थ्य सुविधाओं में सुधार के लिए प्रेरित करने तथा उनमें प्रतिस्पर्धा की भावना का विकास करना है।

स्वस्थ भारत के सपने को साकार करने के लिए स्वास्थ्य सूचकांक में निचले पायदान पर खड़े राज्यों को स्वास्थ्य सुविधाओं में सुधार करने की जरूरत है। बिहार में चमकी बुखार की वजह से सैकड़ों बच्चे काल कलवित हो गए। स्वास्थ्य क्षेत्र में पर्याप्त निवेश तथा बुनियादी स्वास्थ्य सुविधाओं में सुधार करके ऐसे मामलों में कमी लाई जा सकती है। गौरतलब है कि स्वास्थ्य पर सरकारी खर्च के मामले में भारत विश्व स्वास्थ्य संगठन के मानक से काफी पीछे है। विश्व स्वास्थ्य संगठन ने सकल घरेलू उत्पाद का करीबन 5 फीसद हिस्सा स्वास्थ्य पर खर्च करने का मानक बनाया हुआ है। चिंताजनक यह है कि स्वास्थ्य पर सरकारी खर्च के मामले में हम श्रीलंका, बांग्लादेश एवं नेपाल से भी पीछे हैं। चीन में सकल घरेलू उत्पाद का 3 फीसद, अमेरिका और ब्रिटेन में क्रमशः 8.3 और 9.6 फीसद व्यय किया जाता है, जबकि भारत में जीडीपी का एक से डेढ़ फीसद हिस्सा ही स्वास्थ्य सुविधाओं पर खर्च किया जाता है। वहीं आबादी के अनुपात में डॉक्टरों की संख्या के मामले में भी हम काफी पिछड़े हुए हैं। एक लाख की आबादी पर भारत में महज 80 डॉक्टर हैं, जबकि चीन में 130 डॉक्टर हैं।

इसी तरह भारत में एक लाख की आबादी पर मात्र 61 नर्स कार्यरत हैं, जबकि चीन में यह संख्या 96 है। देश में अच्छे और प्रशिक्षित डॉक्टर तथा नर्स तैयार हों, इसके लिए देश में मेडिकल कॉलेजों की संख्या एवं सीटें भी बढ़ाई जाने की जरूरत है। तभी जाकर स्वास्थ्य सेवाओं में गुणवत्ता आएगी।

स्वास्थ्य एक ऐसा क्षेत्र है, जिस पर मानव संसाधन के विकास का भार टिका होता है। इस क्षेत्र में जितना अधिक निवेश होगा, देश उतना ही अधिक मजबूत होगा। किसी प्रदेश में स्वास्थ्य सुविधाओं की स्थिति ही समाज एवं देश का भविष्य निर्धारित करती है। लिहाजा इस क्षेत्र में अधिक से अधिक निवेश एवं निगरानी की जरूरत है। यह अच्छी बात है कि मोदी सरकार ने नई राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति-2017 और आयुष्मान भारत योजना के जरिये देश में सभी नागरिकों को निश्चित, सुलभ एवं उचित स्वास्थ्य सेवाएं मुहैया कराने का लक्ष्य रखा है। वहीं सरकार स्वास्थ्य क्षेत्र में मौजूदा समय में हो रहे एक फीसद के सरकारी खर्च को वर्ष 2025 तक बढ़ाकर 2.5 फीसद करने पर विचार कर रही है। इसके अलावा देश में चिकित्सा व्यवस्था की रीढ़ माने जाने वाले प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्रों सहित रेफरल एवं जिला अस्पतालों की स्थिति में भी सुधार के लिए सरकार को तत्परता दिखानी होगी।

(लेखक बीएचयू में अध्येता हैं)

मेलबाक्स

महिला-विरोधी प्रथा

तत्काल तीन तलाक पर फिर वही बहाने शीर्षक से लिखे अपने लेख में क्षमा शर्मा ने मुस्लिम महिलाओं के प्रति संवेदना का परिचय दिया है। तीन तलाक चालू रखने के पक्ष में दिए जाने वाले तर्क ज्यादातर असत्य पर आधारित हैं। बताया जाएगा कि तीन तलाक तो होता ही बहुत कम है। मानो कम संख्या में अन्याय होना कोई बुरी बात नहीं। किंतु आरिफ मोहम्मद खान द्वारा उपलब्ध कराए गए आंकड़ों के अनुसार लगभग 46 प्रतिशत मुस्लिम औरतें अपने जीवन में तीन तलाक का शिकार बनती हैं। यह आंकड़ा व्यावहारिक आधार पर सच दिखाता है। हर दूसरी मुस्लिम महिला इसकी गवाही देगी। तीन तलाक बिल द्वारा मनमाना तलाक देने वाले मुस्लिम मर्द के लिए निर्धारित तीन वर्ष के कारावास के दंड पर इसी तबके ने बहुत हल्ला मचा रखा है। क्या इन्हें पता है कि एक पत्नी के रहते दूसरा विवाह करने वाले हिंदू पुरुष को क्या दंड मिलता है? उसकी दूसरी शादी निरस्त की जाती है, एक वर्ष का कारावास कानून के अंतर्गत मिलता है, उसे व्याभिचार का दोषी मानकर आइपीसी की धारा 497 में 6 वर्ष का कारावास और मिलता है। साथ ही सरकारी सर्विस में हो तो बर्खास्त भी किया जाता है। हिंदू कानून की इन व्यवस्थाओं का कोई विरोध कभी नहीं सुना गया। हिंदू को कुल 7 साल की जेल के मुकाबले मुस्लिम के लिए प्रस्तावित 3 साल की सजा को नाकाबिलेबर्दाश्त क्यों समझा जा रहा है? कारावास के बिना कानून को निवारक या निरोधक कैसे बनाया जा सकता है? तमाम अपराधों हेतु जेल की सजाएं मौजूद हैं। कभी किसी ने नहीं कहा कि अपराधी के जेल जाने के बाद उसके परिवार को कौन पालेगा? इसी मामले में यह तर्क क्यों दिया जा रहा है? वस्तुतः यह तर्क तीन तलाक के समर्थकों की दिमागी उपज है। इसे विचार-योग्य न मानते हुए औरतों पर सदियों से होते आ रहे जुल्म को दूर किया ही जाना चाहिए।

आस्था गर्ग, बागपत रोड, मेरठ

सीट बढ़ाने पर भी होनी चाहिए बात

भारत का केंद्रीय विश्वविद्यालय यानी दिल्ली विश्वविद्यालय इस समय 2020 की प्रवेश प्रणाली को लेकर समाचार पत्रों में चर्चा का विषय बना हुआ है। दिल्ली विश्वविद्यालय प्रशासन ने अपने निर्धारित प्रवेश प्रणाली कार्यक्रम को लेकर पहली सूची जारी कर दी है। विभिन्न पाठ्यक्रमों में जिस तरह से अंकों के प्रतिशत की सूची जारी की गई है, उसमें 98-99 फीसद अंकों वाले छात्र-छात्राओं के लिए प्रवेश के दरवाजे खोले गए। ऐसे में सवाल यह उठता है कि दिल्ली विश्वविद्यालय भारत का केंद्रीय विश्वविद्यालय है और यहां पर प्रवेश लेने के लिए विभिन्न प्रदेशों से बच्चे आते हैं। लेकिन लंबे समय से विश्वविद्यालय के कॉलेजों में कई तरह की मांगे की जाती रही हैं, जिस पर न तो विश्वविद्यालय प्रशासन ध्यान दे रहा और न ही केंद्र सरकार। विभिन्न कॉलेजों को सायं कालीन बनाने की मांग लंबे समय से जोर पकड़ रही है। दिल्ली में निवास करने वाले छात्र-छात्राओं के लिए अलग से निर्धारित कोटा बनाने की बात भी कई वर्षों से ठंडे बस्ते में है। सीटों को बढ़ाने पर भी ध्यान नहीं दिया जा रहा है। इसके साथ-साथ लंबे समय से कुछ ऐसे पाठ्यक्रम भी हैं, जिस पर सीटों में इजाफा करने की बात कभी नहीं की गई। लगातार अंकों का प्रतिशत बढ़ता जा रहा है और सीटें घटती जा रही हैं। विश्वविद्यालय प्रशासन इस विषय पर आवश्यक रूप से ध्यान दे।

विजय कुमार धनिया, नई दिल्ली

देशहित में हो गठबंधन

बीते लोकसभा चुनावों में समाजवादी पार्टी एवं बहुजन समाज पार्टी का गठबंधन खासा चर्चा का विषय रहा। कई शर्तों पर आधारित इस गठबंधन से उत्तर प्रदेश की दोनों क्षेत्रीय पार्टियों को काफी उम्मीदें थीं, परंतु प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी की लहर में सभी आशा-अकाक्षाएं धूमिल हो गईं। धर्म, जाति, स्वार्थ एवं अहंकार पर आधारित इस गठजोड़ के गणित को जागरूक जनता पहले ही भांप गई थी, जिसकी परिणति चुनाव परिणाम में हार के रूप में हुई। हम 21वीं सदी में जी रहें हैं। देश में जागरूक मतदाताओं की एक नई जमात तैयार हो गई है। अब धर्म, जाति के फेर में फंसाकर जनता को बेवकूफ नहीं बनाया जा सकता। भविष्य में भी राजनीतिक दलों को एक बात ध्यान में जरूर रखना चाहिए कि गठबंधन का मूल उद्